इस्लाम

एक अध्ययन

डा. जमीला आली जाफ़री

मधुर सन्देश संगम

अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव जामिआनगर, नई दिल्ली-25

इस्लाम

एक अध्ययन

डा० जमीला आली जाफ़री

मधुर सन्देश संगम

ई० २०, अबुल फ़ज़्ल इन्क़लाब जामिआनगर, नई दिल्ली-२५

प्रस्तावना

किसी भी क्षेत्र में अज्ञान अभिशाप बन जाता है। अल्पज्ञता उससे भी अधिक घातक प्रमाणित होती है। वैसे कोई भी धर्म हो, वह दोष मुक्त विश्वास है, आत्मशान्ति का सम्बल है। परन्तु इस धरती पर अज्ञानवश धर्मगत मतभेद पनपते रहते हैं। तद्विषयक विकृतियां संहार का कारण बनती हैं। लोग वस्तु-स्थिति से अनभिज्ञ होने के कारण धर्म के पुण्य उद्देश्य से स्खलित हो बात की बात में उद्रेकात्मक भावनाओं का शिकार हो जाते हैं। मानव समाज को इस परिणति से मुक्त करने के लिए ऐसे साहित्य की परम आवश्यकता है जो सही दिशा बोध दे सके।

अतः इस्लाम धर्म और दर्शन के अध्येता एवं प्रेमियों के लिए इस्लाम की सही पहचान सुलभ कराने का लक्ष्य दृष्टि में रखते हुए 'इस्लामः एक अध्ययन' प्रस्तुत है। आशा है यह पुस्तिका जिज्ञासुओं को सन्तुष्ट कर सकेगी।

— जमीला आली जाफ़री

जी/१, अरविन्द कालोनी
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी
१८ दिसम्बर १९८१

इस्लाम : रूपरेखा और सिद्धांत

ईसवी की सातवीं शताब्दी में एक ऐसी क्रांतिकारी आध्यात्मिक विचारधारा का आविर्भाव हुआ जो विश्व में इस्लाम के नाम से अभिहित हुयी।[1] 'इस्लाम' अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है—शांति में प्रवेश करना। यह संधि, कुशलता, आत्मसमर्पण, आज्ञापालन एवं विनम्रता के संदर्भ में भी प्रयुक्त होता है। इस्लाम अर्थात् वह धर्म जिसके द्वारा मनुष्य शांति-प्राप्ति के लिए परमात्मा की शरण लेता है तथा कुरआन और हदीस द्वारा निर्दिष्ट सिद्धांतों के आधार पर अन्य मनुष्यों के प्रति प्रेम एवं अहिंसा का व्यवहार करता है।[2]

इस्लाम के उदय के पूर्व का युग क्रमबद्ध सामग्री के अभाव में अंधकारमय है, मुसलमान इतिहासज्ञों ने इस युग को 'ज़मान-ए-जाहिलीयत'[3] कहा है। एक समय था कि अरब संस्कृति की गणना विश्व की महान और उन्नत संस्कृतियों में होती थी। वैसे ईरान प्रगतिशील देश था, परन्तु अरबवासी ईरानियों को अजमी (गूंगा) कहते थे। इससे अरबवासियों की उन्नत संस्कृति का अनुमान भली-भांति लगाया जा सकता है। किंतू इस्लाम के आविर्भाव के समय अरबवासी अपने उन्नत जीवन-मार्ग से भटके हुए थे, चहुंओर वर्गगत विषमता, अज्ञान, अनाचार, अशांति और अमानवीय कृत्यों, का साम्राज्य परिव्याप्त था। सुरा और सुन्दरी का प्रयोग तथा दास प्रथा समृद्धि और ऐश्वर्य की परिचायक कसौटी मानी जाती थी। समाज में विवाह जैसा पवित्र बंधन उपेक्षित था। अरब जीवन की वैषम्यपूर्ण स्थिति का अंकन करते हुए अल्-कुत्बी ने लिखा है—हम लोगों का कार्य शत्रुओं और पड़ोसियों के अतिरिक्त यदि अन्य कोई न मिले तो अपने भाई

---

१. कुरआन के अनुसार इस्लाम उतना ही पुराना है जितना इस धरती पर स्वयं मानव।

२. शारटर इंसाइक्लोपीडिया आफ इस्लाम, पृ० १७६-१७८

३. आर० ए० निकलसन—लिटररी हिस्ट्री आफ दि अरब्स (केम्ब्रिज यूनीवर्सिटी) पृ० २५।

पर ही आक्रमण करना है।[1] इस युद्धप्रिय, घुमक्कड़ अरब जाति का जीवन अत्यंत असंगठित, अनियमित एवं आचारहीन हो गया था। ये लोग धर्म और दर्शन की सूक्ष्मताओं से अनभिज्ञ थे। धार्मिक आस्था के नाम पर इनमें मूर्तिपूजा का प्रचलन था।

इस प्रकार इस्लाम पूर्व अरबवासी जीवन की कठोरताओं और अज्ञान की कुरूपताओं से घिर कर पूर्ण पतनोन्मुख अवस्था में सांस ले रहे थे। इनके पास सभ्यता और संस्कृति के नाम पर ऐसा कुछ शेष न रह गया था जो विश्व को उनकी ओर आकर्षित करता।

ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति में हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि-व-आलिहि व सल्लम[2] का अरब के कुरैश नामक एक प्रमुख वंश में १२ रबी-उल्-अव्वल (सोमवार, ११ नवंबर ५६९ ई०) को मक्के में आविर्भाव हुआ। आरंभ से ही आप गंभीर, सदाचारी, एकांतप्रिय और उदात्तचित थे। जब आप चालीस वर्ष की अवस्था को पहुंचे तो आप पर ईश्वर की ओर से फ़रिश्तों द्वारा 'वह्य' (ख़ुदाई हिदायत) आना शुरू हुयी और आपको नुबूवत की ज़िम्मेदारी सौंपी गयी। फलस्वरूप आप अरब जाति को कल्याण-पथ की ओर प्रेरित करने के कार्य में संलग्न हो गए। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने अल्लाह के आदेशानुसार लोगों को सदाचार की शिक्षा दी। उन्हें प्रशिक्षित कर आत्मशुद्धि का मार्ग प्रदर्शित किया और समाज को तथ्यहीन रीति-रिवाजों से मुक्त कर उच्चकोटि के नैतिक व्यवहार, संस्कृति, सामाजिकता और अर्थ के नए नियमों पर व्यवस्थित कर सुसंगठित किया। पारिवारिक संगठन के नियम, विवाह-तलाक़ के क़ानून, अनाथों और निर्बलों के अधिकारों की रक्षा, विरासत का विभाजन, लेन-देन के मामलों का सुधार, घरेलू झगड़ों को निपटाने के तरीक़े, शराब पीने पर पाबन्दी, ब्याज, जुआ और सट्टे की रोकथाम, शुद्धता और पवित्रता सम्बन्धी आदेश निर्धारित हुए, जिनके आधार पर एक उच्च संस्कृति और सभ्यता का शिलान्यास हुआ। इस्लामी आन्दोलन की प्रमुख विशेषता यह है कि वह व्यक्ति और संघ की परिष्कार प्रक्रिया के प्रत्येक पक्ष पर सम्पूर्ण ध्यान रखता है तथा उसके

---

१. रामलेंडाओ – इस्लाम एण्ड दि अरब्स, पृ० १९७।

२. अल्लाह उन पर और उनकी आल (स्वजन) पर अपनी मेहरबानी (कृपा) और सलामती भेजे।

अंतर्गत यह प्रयत्न किया जाता है कि लोग अल्लाह के 'दीन'[1] का संदेश लेकर आगे बढ़ें। उनमें नैतिक, बल, ईश्वरभय और उच्च कोटि के मानवीय गुणों का विकास हो। वास्तव में इस्लाम ऐसी परिपूर्ण जीवन-व्यवस्था है,जिसमें जीवन के सर्वतोन्मुखी विकास का एक पूर्ण एवं पूर्व-निर्धारित कार्यक्रम है और जीवन सम्बन्धी सम्पूर्ण समस्याओं का पूर्ण समाधान भी। यह लक्ष्य करने की बात है कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने उन अरबवासियों को जिन्हें संस्कृति, नैतिकता और ज्ञान के क्षेत्र में कोई स्थान प्राप्त न था, सभ्य और ज्ञान का अनुरागी बनाया और संसार विश्वबंधुत्व के सिद्धांतों से परिचित हुआ। यह कार्य कुरआन की शिक्षाओं के माध्यम से किया गया।

पवित्र कुरआन मानव जाति की एक सर्वनिष्ठ आध्यात्मिक उपलब्धि है। यह ऐसा महान क्रांतिकारी ग्रन्थ है जिसमें अत्यन्त व्यापक, सार्वकालिक एवं व्यावहारिक सिद्धांतों का संकलन है। यह २३ वर्ष की अवधि में सूरतों (परिच्छेदों) के रूप में विभिन्न अवसरों पर उतरा, जिन्हें कंठ के अतिरिक्त खजूर के पत्तों, हड्डियों और झिल्लियों पर सुरक्षित रखा गया। हज़रत अबूबक्र रज़ि० के निरीक्षण में इसकी आयतों को हज़रत ज़ैद बिन साबित अंसारी रज़ि० द्वारा संगृहीत किया गया। इसमें छोटी बड़ी ११४ सूरतें हैं। इस ग्रन्थ में साहित्य, शब्दों का मधुर विन्यास, संगीत के स्वर-प्रवाह के साथ विचारों की गहराई और ज्ञान की व्यापकता विद्यमान है।

कुरआन शरीफ़ में तौहीद (एकेश्वरवाद), अल्लाह के गुण, आख़िरत (परलोक), रिसालत (हज़रत मुहम्मद सल्ल० की नुबूवत पर विश्वास करना), ईश्वर भय, धैर्य आदि का उल्लेख है। इसकी वार्ताओं में अत्यन्त अनुकूलता और तार्किक समन्वय उपलब्ध होता है। इसकी दृष्टि में मानव जाति के पथभ्रष्ट होने के मूल कारण हैं, मनुष्यों का आधारहीन अनुमानों पर निर्भर रहना, उनकी अज्ञानता, हठधर्मी तथा पक्षपात।[2]

---

१. दीन—१. धर्म, २. जीवन प्रणाली, ३. जीवन व्यवस्था। वह विधान जिस पर मुनष्य के विचार एवं कार्य-पद्धति आधारित हो।

२. 'और इनमें से कुछ तो इस पर 'ईमान' लाएंगे और कुछ इनमें से ईमान नहीं लायेंगे और तेरा 'रब' बिगाड़ पैदा करने वालों को भली-भाँति जानता है।'
— १०: सूर-ए-यूनुसः ४०।

जब कि उसके लिए लिख दिया गया है कि जो कोई उससे मित्रता का नाता

वास्तव में कुरआन पर विश्वास करने वाले के जीवन की सार्थकता इसमें है कि मानव जाति पैग़म्बरों के जीवन चरित्र का अध्ययन करे, क्योंकि उनकी कोई बात काल्पनिक या अनुमान पर आधारित नहीं है, वे जो बातें भी कहते हैं, ईश्वर प्रदत्त होने के कारण विश्वसनीय हैं। कुरआन में विभिन्न स्थानों पर विश्व सम्बन्धी सूक्ष्म संकेतों को व्यवस्थित क्रम से प्रस्तुत कर वास्तविकता का उद्घाटन किया गया है।[1] इसके अतिरिक्त जीवन क्या है? उसका उद्देश्य क्या है? जन्म-मरण सम्बन्धी विवेचन, जीवन को सफल बनाने के नियम और सिद्धांत पाप-पुण्य का लेखा-जोखा, ज्ञान-कर्म की बातों आदि की विस्तारपूर्ण चर्चा की गई है। कुरआन की शिक्षा अत्यन्त स्पष्ट और व्यापक है जो सत्य को अभिव्यक्त कर मनुष्य के समक्ष एक उच्च और संतुलित जीवन प्रणाली प्रस्तुत करती है। इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण जीवन-व्यापार आ जाता है। इसमें इस्लाम का जो स्वरूप चर्चित और चित्रित है उसके मूलभूत आधार हैं— तौहीद (एकेश्वरवाद) भ्रातृत्व भावना, सांसारिक व्यावहारिकता और आध्यात्मिकता।

तौहीद (एकेश्वरवाद) ईमान (धारणा एवं आस्था) का सर्वोच्च

जोड़ेगा तो वह उसे पथभ्रष्ट करके रहेगा और उसे दहकती आग की यातना की ओर राह दिखाएगा।' — २२: सूर-ए-अल-हज्ज: ४।

'और लोगों में कोई ऐसा है जो किसी ज्ञान और मार्ग-दर्शन और प्रकाशमान 'किताब' के बिना अल्लाह के बारे में झगड़ता है।' — २२: सूर-ए-अल-हज्ज: ८।

१. 'वही है जिसने सूर्य को प्रकाशमान किया और चन्द्रमा को उजियाला बनाया और चन्द्रमा (के घटने-बढ़ने) की मंज़िलें ठहराईं, ताकि तुम वर्षों की गिनती और हिसाब मालूम कर लिया करो। अल्लाह ने यह सब कुछ हक़ (उद्देश्य) के साथ पैदा किया है। वह अपनी 'आयतें' खोल-खोलकर बयान करता है, उन लोगों के लिए जो जानने वाले हैं।' — १०: सूर: ए यूनुस: ५।

"अल्लाह ही है जिसने आकाशों को बिना सहारे के ऊंचा किया जैसा कि तुम उन्हें देखते हो, फिर वह राजसिंहासन पर विराजमान हुआ और उसने सूरज और चांद को काम पर लगाया। हर चीज एक नियत समय के लिए चल रही है। वही इस काम का इन्तजाम चला रहा है, कदाचित तुम अपने रब से मिलने का विश्वास करो।' — १३: सूर-ए-अर-रअद: २।

शिखर है। इस्लाम की ईश्वर विषयक धारणा अत्यन्त विस्तृत और प्रौढ़ है। इसकी आध्यात्मिकता अनुचित छेन्द्रान्वेषणों और जटिलताओं से मुक्त है। यही कारण है कि इस्लाम में ईश्वर का स्वरूप संदिग्ध न हो कर अत्यन्त स्पष्ट है। क़ुरआन में ईश्वर की विराट सत्ता का विशद् वर्णन किया गया है।[1] वह सम्पूर्ण विश्व का स्वामी[2] स्रष्टा[3] और शासक[4] है। उसके अतिरिक्त इस संसार में कोई पूजनीय नहीं है।[5] वह सर्वोत्तम संरक्षक, मित्र और सहायक है।[6] वह अत्यन्त कृपालु भी है[7] और कठोर

---

१. 'कहो, मैं पनाह लेता हूं लोगों के पालन कर्त्ता की। लोगों के सम्राट की। लोगों के इलाह (पूज्य) की।' — ११४: सूर-ए-अन-नास: १-२-३।

२. 'क्या तुम नहीं जानते कि अल्लाह ही है, जिसके लिए आकाशों और धरती का राज्य है। वही जिसे चाहे यातना दे और जिसे चाहे क्षमा कर दे। अल्लाह को हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।' — ५: सूर-ए-अल-माइदा: ४०।

३. 'वह अल्लाह है, परिरूपक, अस्तित्व प्रदान करने वाला, रूपकार, उसी के लिए अच्छे नाम हैं। जो भी वस्तु आकाश और धरती में है उसकी तसबीह करती है और वह प्रभुत्वशाली तथा तत्वदर्शी है।' — ५९: सूर-ए-अल-हश्र: २४।

४. वह अल्लाह है, जिसके सिवा कोई पूज्य नहीं, सर्वशासक है, अत्यन्त गुणवान, शांति स्वरूप, शरणदाता, संरक्षक, प्रभुत्वशाली, अत्यन्त महान् है, अल्लाह की महिमा के प्रतिकूल है वह 'शिर्क' जो ये लोग करते हैं।'
— ५९: सूर-ए-अल-हश्र: २३।

५. 'अब यदि ये लोग मुंह मोड़ लें तो कह दो—मुझे अल्लाह काफी है। उसके सिवा कोई इलाह (पूज्य) नहीं। उसी पर मैंने भरोसा किया और वही बड़े राज सिंहासन का 'रब' (स्वामी) है।' — ९: सूर-ए-अत-तौबा: १२९।

६. 'और 'जिहाद' (जान तोड़ कोशिश) करो अल्लाह के (मार्ग) में ठीक-ठीक जिहाद। उसने तुम्हें चुन लिया है—और 'दीन' में तुम पर कोई तंगी नहीं रखी, तुम्हारे बाप इब्राहीम का पंथ (तुम्हारा पंथ है।) उसने तुम्हारा नाम मुस्लिम रखा था। पहले भी और उसमें भी—ताकि 'रसूल' तुम पर गवाह हो और तुम लोगों पर गवाह हो। तो नमाज़ क़ायम करो और ज़कात दो और अल्लाह (के दामन) को मज़बूती से पकड़े रहो। वही तुम्हारा स्वामी और संरक्षक मित्र है। वह क्या ही अच्छा संरक्षक और क्या ही अच्छा सहायक है।'
— २२: सूर-ए-अल-हज्ज: ७८।

७. 'और जब तुम्हारे पास वे लोग आएं जो हमारी 'आयतों' पर 'ईमान' लाते हैं,

दण्ड विधायक भी।[1] कुरआन में प्रदर्शित मार्ग का अनुकरण करते हुए तौहीद (एकेश्वरवाद) पर विश्वास करना प्रत्येक मुसलमान का कर्त्तव्य है। यह एक प्रकार से दास्य भक्ति ही है जिस में बन्दा अपने आप को अर्पित कर देता है। इस्लाम में तौहीद से अलग ईश्वरीय भाव की कोई गुंजाइश नहीं है।

इस्लाम में प्रतिपादित बंधुत्व की भावना उसका सबसे बड़ा आकर्षण है। इसके द्वारा वर्गगत विषमताएं समाप्त हो जाती हैं तथा परस्पर प्रेम, मैत्री और उदारता जैसे सद्भावों की नींव दृढ़ होती है। सब मुसलमान परस्पर भाई-भाई हैं।[2] हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने अपने अंतिम हज्ज और स्वर्गवास के निकट समय में अरफ़ात के मैदान में उपदेश देते हुए भ्रातृत्व भावना पर बल दिया था— जो हदीस में संकलित है।[3]

'तौहीद' पर विश्वास करने वाला प्रत्येक मुसलमान धर्म-बंधु होता है। इसमें निहित ईश्वरीय शक्ति सबको एकता के सूत्र में बांधती है। इसी भ्रातृत्व-भावना से अनुप्राणित होने के कारण इस्लाम का धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक पक्ष अत्यन्त सशक्त और प्रभावशाली रहा

तो कहो—तुम पर सलाम है। तुम्हारे 'रब' ने दयालुता को अपने ऊपर अनिवार्य कर लिया है कि तुम में जो कोई नादानी से कोई बुराई कर बैठे फिर 'तौबा' कर ले और सुधर जाए तो निस्संदेह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है।' — ३ : सूर-ए-अल-अनआम : ५४।

१. 'और ये लोग भलाई से पहले तुमसे बुराई के लिए जल्दी मचा रहे हैं, हालांकि इनसे पहली कितनी यातनाएं गुज़र चुकी हैं। परन्तु तेरा 'रब' लोगों को उनके ज़ुल्म के होते हुये क्षमा कर देता है और निस्संदेह तेरा 'रब' कड़ा दण्ड देने वाला भी है।' — १३ : सूर-ए-अर-रअद् : ६।

२. 'और सब मिलकर अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से पकड़ो और फूट में न पड़ो और अल्लाह की उस कृपा को याद करो जो उसने तुम पर की है। तुम एक दूसरे के शत्रु थे, तो उसने तुम्हारे दिलों को परस्पर एक-दूसरे से जोड़ दिया और उसकी कृपा से भाई-भाई हो गए और तुम आग के एक गड्ढे के बिल्कुल किनारे खड़े थे—अल्लाह तुम्हारे लिए अपनी 'आयतों' को स्पष्ट करता है, ताकि तुम मार्ग पा लो।' — ३ : सूर-ए-आले-इमरान : १०३।

३. कुरआन मजीद—भूमिका—मक्तबा अल-हसनात् रामपुर, पृ० ४२।

और अपने आविर्भाव के उपरांत कुछ ही वर्षों में एशिया, अफ्रीक़ा और यूरोप के अधिकांश भू-भाग पर छा गया।

इस्लाम में पूर्णरूप से सांसारिक व्यावहारिकता विद्यमान है। वह विरक्ति अथवा लौकिक सुखों के परित्याग पर बल नहीं देता। 'पूर्वी एशिया के सभी धर्मों में इस्लाम ही एकमात्र ऐसा धर्म है जो सांसारिकता के निकट और वैराग्य से अत्यधिक दूर है।[1] ईश्वर ने स्वयं अपने बन्दों के लिए इस विश्व में सुख-सुविधा के साधन जुटा दिए हैं।[2] उन्हें नाना प्रकार की नेअमतें देकर[3] सम्मानित और प्रतिष्ठित किया।[4] हरम (शांतिगृह) बनाया[5] और मनुष्य को सुन्दरतम रूप में उत्पन्न किया।[6]

इस्लाम की लोकप्रियता में उसके धार्मिक नेताओं का महत्वपूर्ण हाथ रहा। इससे ध्वनित होता है कि हज़रत मुहम्मद सल्ल० और उनके उत्तराधिकारी कितने महान व्यक्ति थे—'आरम्भिक काल में जो चार ख़लीफ़ा हुए, उन्होंने सादगी, सच्चरित्रता और वीरता तथा त्याग का ऐसा अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया कि इस्लाम का आचार पक्ष बहुत ऊंचा उठ गया और उसके अन्दर उन लोगों की संख्या बढ़ने लगी जो गृहस्त रहकर भी वैराग्य निभा सकते थे, जो गद्दी पाकर भी तबियत के फ़क़ीर रह सकते थे और तलवार उठाकर भी दया का तिरस्कार नहीं करते

---

१. एच० ए० आर० गिब्स—मोहम्मडनिज़्म, पृ० १०३।

२. 'और तुम्हें वह कुछ दिया जो तुमने उससे मांगा, यदि तुम अल्लाह की नेअमतों को गिनना चाहो तो उन्हें पूरा गिन नहीं सकते।' — १४: सूर-ए-इब्राहीम: ३४।

३. 'तुम्हारे पास जो नेअमतें हैं अल्लाह की ओर से हैं।' —१६ : सूर-ए-अन-नह्ल: ५३।

४. 'और हमने आदम की औलाद को श्रेष्ठता प्रदान की। और उसे भूमि तथा समुद्र में सवारी दी, पाक चीज़ों की रोज़ी दी और उसे ऐसे बहुतों की अपेक्षा जिन्हें हमने पैदा किया है बड़ाई दी।' — १७: सूर-ए-बनी इसराईल: ७०।

५. 'क्या इन्होंने देखा नहीं कि हमने एक शांतिपूर्ण 'हरम' बना दिया है, हालांकि इनके आस-पास से लोग उचक लिये जाते हैं तो क्या ये मिथ्यात्व को मानते हैं और अल्लाह की नेअमत के साथ 'कुफ़्र' करते हैं।'

— २९: सूर-ए-अल-अनकबूत: ६७।

६. 'निश्चय ही हमने मनुष्य को अच्छी से अच्छी प्रकृति का बनाया।'

— ९५: सूर-ए-अत-तीन: ४।

थे।[1] 'इस्लाम के इस सांसारिक और व्यावहारिक स्वरूप ने मानव समाज के उस वर्ग को अपनी ओर आकर्षित किया जो धर्म, जाति एवं वर्गगत विषमताओं के शिकंजे में जकड़ा हुआ था। कुरआन में मानव जीवन सम्बन्धी प्रत्येक समस्या का व्यावहारिक समाधान वर्तमान है। सांसारिक जीवन से जुड़े रहकर हज़रत मुहम्मद सल्ल० द्वारा प्रदर्शित मार्ग का अनुगमन करते हुए 'तौहीद'' पर आधारित अपने 'ईमान' की रक्षा करना प्रत्येक मुसलमान का परम कर्तव्य है।

इस्लाम सांसारिक व्यावहारिकता के निकट होते हुए भी व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास पर विशेष बल देता है। सांसारिक बंधनों द्वारा आबद्ध होने पर भी उसको प्रत्येक क्षण ईश्वर का भय और कर्तव्य-अकर्तव्य का ध्यान बना रहता है। नमाज़, रोज़ा, ज़कात और हज्ज उसकी आध्यात्मिक साधनों के महत्वपूर्ण अरकान (आधार) हैं। 'नमाज़' निश्चित समय में नामस्मरण का ऐसा साधन है जिस के द्वारा व्यक्ति दिन में पांच बार ईश्वर के समक्ष उपस्थित होता है। यह नमाज़ जीवन की सफलता का मूल आधार है।[2] 'रोज़ा' एक प्रकार का तप है जो आत्मा को परिष्कृत करता है। यह कुरआन जैसी महत्वपूर्ण देन के लिए ईश्वर के प्रति आभार प्रदर्शन की एक पद्धति है।[3] 'ज़कात' भोग-विलास को सीमित करने की विधि है। इस के द्वारा मनुष्य बुराइयों से मुक्त रहता है।[4] यह हृदयशुद्धि

---

१. रामधारी सिंह 'दिनकर' — संस्कृत के चार अध्याय — पृ० २२८।

२. 'सफलता प्राप्त की जिसने अपने आपको संवारा और अपने 'रब' के नाम का स्मरण किया तो नमाज़ पढ़ी।' — ८७: सूर-ए-अल-आला: १४, १५।

३. 'रमज़ान' का महीना है जिसमें कुरआन उतारा गया लोगों के लिए मार्ग-दर्शन बनाकर और मार्ग-दर्शन और सत्य-असत्य के अन्तर के स्पष्ट प्रमाणों के साथ। तो जो कोई तुम में से इस महीने में मौजूद हो, उसे चाहिए कि उसमें 'रोज़े' रक्खे और जो बीमार हो या सफ़र पर हो वह दूसरे दिनों में संख्या पूरी कर ले। वह तुम्हारे लिए सख़्ती नहीं करना चाहता। तुम अल्लाह की बड़ाई करो इस पर कि उसने तुम पर राह खोली है ताकि तुम कृतज्ञ बनो।'
— २: सूर-ए-अल-बक़रा: १८५।

४. 'और यदि तुम खुले तौर पर 'सदक़ा' दो तो यह भी अच्छी बात है और यदि उसे छिपाकर ग़रीबों को दो तो यह तुम्हारे लिए ज़्यादा अच्छा है और वह तुम्हारी कितनी बुराइयों को दूर कर देगा और अल्लाह जो कुछ तुम करते हो उसकी ख़बर रखता है।' — २: सूर-ए-अल-बक़रा: २७१।

का एक साधन है।[१] हज धार्मिक सतर्कता और कर्तव्य परायणता का परिणाम है। जो 'कअबः' की यात्रा कर सकता है उस पर हज्ज फ़र्ज़ है।[२]

हज़रत मुहम्मद सल्ल० और उनके उत्तराधिकारियों ने मन-प्राण से इस्लाम को स्वीकार किया। इसके द्वारा उन्हें आंतरिक शांति और वाह्य शक्ति प्राप्त हुयी। यही कारण था कि उन्होंने साहसपूर्वक बड़ी से बड़ी हुकूमत और शक्तियों से टक्कर ली। ईश्वरीय विश्वास ही उनके पराक्रम और साहस का आधार था। ईश्वर-मार्ग में प्राण अर्पित करना वे अपनी 'सआदत' और मृत्यु को मधु से अधिक मधुर समझते थे।

क़ुरआन के अनुसार दीन-ए-इस्लाम हज़रत आदम से आरम्भ होता है। आगे चलकर विभिन्न युगों में विभिन्न पैग़म्बरों द्वारा इसके महत्वपूर्ण सिद्धांत प्रकाश में आते रहे। अन्त में हज़रत मुहम्मद सल्ल० पर अल्लाह ने यह 'वह्य' उतारी कि 'आज मैंने तुम्हारे 'दीन' को तुम्हारे लिए मुकम्मल कर दिया है और अपनी नेमत तुम पर तमाम की दी है और तुम्हारे लिए इस्लाम को तुम्हारे 'दीन' की हैसियत से क़ुबूल कर लिया है।'[३] इस प्रकार हज़रत आदम से लेकर हज़रत मुहम्मद सल्ल० तक एक लाख चौबीस हज़ार पैग़म्बर हुए हैं और उन सबका धर्म इस्लाम ही था। इनमें से कुछ पैग़म्बरों के नाम ज्ञात हैं, शेष अज्ञात हैं।

इस्लाम धर्म और दर्शन

इस्लाम की दृष्टि में मनुष्य इस पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि है।[४]

---

१. 'हे नबी! तुम उनके मालों में से 'सदक़ा' लेकर उन्हें पाक करो और उनकी आत्मा को विकसित करो तथा उनके लिए दुआ करो। निस्सन्देह तुम्हारी दुआ उनके लिए संतोष निधि है और अल्लाह सुनने और जानने वाला है।'

— ९: सूर-ए-अत-तौबा: १०३।

२. 'निस्सन्देह पहला घर जो लोगों के लिए बनाया गया वही है जो मक्का में है, सारे संसार के लिए बरकत और मार्ग-दर्शन का केन्द्र है। वहां स्पष्ट निशानियां हैं। इब्राहीम का निवास स्थान है, जिसने उसमें प्रवेश किया वह निश्चिन्त हुआ और लोगों पर अल्लाह का हक़ है कि जो वहां तक पहुँचने की सामर्थ्य रखते हैं, उस घर का 'हज्ज' करें और जिसने 'कुफ़्र' किया, तो अल्लाह सारे संसार से बे-परवाह है।' — ३: सूर-ए-आले-इमरान: ९६, ९७।

३. ५: सूर-ए-अल-माइदा: ३।

४. 'और याद करो जब तुम्हारे 'रब' ने 'फ़रिश्तों से कहा—मैं धरती में

जब उसने मनुष्य को इतनी महत्ता प्रदान की है तो उसका कर्तव्य हो जाता है कि वह अपने स्रष्टा की 'इबादत' (उपासना) करे और उस ऊँचाई पर पहुँचे कि जहाँ ईश्वर का सच्चा प्रतिनिधित्व करके अपने अस्तित्व को सार्थक बना सके। अतः इस ऊँचाई तक पहुँचने के लिए प्रत्येक मुसलमान निम्नांकित पाँच धार्मिक कृत्यों द्वारा अपने लक्ष्य की पूर्ति करता है—

१. तौहीद (एकेश्वरवाद)
२. नमाज़ अथवा सलात
३. रोज़ा (उपवास)
४. ज़कात (दान)
५. हज्ज (तीर्थ)

१. तौहीद (एकेश्वरवाद)

इस्लाम शुद्ध तौहीद (एकेश्वरवाद) का दीन है। वह 'अल्लाह' और 'बंदे' के बीच 'पैग़म्बर' को मार्गदर्शक मानता है। इस्लाम पुरोहितवाद को स्वीकार नहीं करता। वह किसी साकार सत्ता को उपासना का आधार नहीं बनाता जिसको मनुष्य आध्यात्मिक चिंतन के क्षणों में आराध्य की भांति बसाकर अपना सारा ध्यान और शक्ति उस पर केंद्रित कर दे और उसमें तन्मय हो जाये। इसमें चित्र या मूर्ति जैसे किसी माध्यम की आवश्यकता नहीं है। 'इस्लाम एक ऐसा दीन है जो विचारों की पवित्रता, चिंतन की ऊंचाई, संकल्प और इच्छा की निर्मलता, ईश्वर के अतिरिक्त अन्य वस्तुओं से विरक्ति, कर्मनिष्ठा तथा चिंतन और विश्वास के उस धरातल पर स्थित है कि उससे उत्तम मानदंड और ऊंचा धरातल सोचा नहीं जा सकता।[1]

इस्लाम में 'अल्लाह' धरती और आकाश का सम्राट[2] सर्वज्ञाता[3]

'ख़लीफ़ा' बनाने वाला हूं।' उन्होंने कहा—'क्या तू बिगाड़ और रक्तपात करने वालों को वहां नियुक्त करेगा। और हम तेरी प्रशंसा के साथ तेरा महिमागान करते और तेरी पवित्रता का वर्णन करते हैं।'

— २ : सूर- ए-अल-बक़रा : ३०, ३४।

१. अबुल-हसन अली नदवी, अरकान-ए-अरबअ : तिर्मिज़ी और नसई, पृ. २९१।

२. 'क्या तुम नहीं जानते कि आकाशों और धरती का राज्य अल्लाह के लिए है और तुम्हारा अल्लाह के सिवा न कोई संरक्षक मित्र है और न सहायक।'

— २ : सूर-ए-अल-बक़रा : १०७।

३. 'वही तो है जिसने तुम्हारे लिये धरती की सारी वस्तुयें उत्पन्न कीं। फिर

अत्यन्त उदार, क्षमाशील[१], करुणामय और कृपाशील है।[२] वह सर्वशक्तिमान शासक,[३] स्रष्टा,[४] पालनकर्त्ता,[५] बन्दों के लिए जीवन की सुख-सुविधाएं प्रदान करने वाला,[६] और एक है।[७] उसके अतिरिक्त कोई उपास्य नहीं है।[८] 'ला इलाह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' (नहीं है कोई ख़ुदा मगर अल्लाह, मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं।) तौहीद की आधारशिला है। यही मुसलमानों के 'दीन' का मूलमन्त्र है। इस्लाम में तौहीद को छोड़

आकाश की ओर रुख़ किया और बिलकुल ठीक तथा संतुलित रूप से सात आकाश बनाए। वह हर चीज़ को जानने वाला है।' — २ : सूर-ए-अल बक़रा : २९।

१. 'मेरे बन्दों को सूचना दे दो कि मैं बड़ा ही क्षमाशील और दया करने वाला हूं।' — १५ : सूर-ए-अल-हिज्र : ४८।

२. 'जिन लोगों ने 'कुफ़्र' किया 'किताब वाले' हों या 'मुशरिक' (बहुदेववादी) हों, कोई नहीं चाहता कि तुम्हारे 'रब' की ओर से तुम पर कोई भलाई उतरे। और अल्लाह जिसे चाहता है अपनी दयालुता के लिए ख़ास कर लेता है और अल्लाह बड़ा अनुग्रह वाला है।' — २ : सूर-ए-अल-बक़रा : १०५।

३. 'आकाश और धरती और जो कुछ उनके बीच है सबका राज्य अल्लाह ही के लिए है और उसे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।' -५ : सूर-ए-अल-माइदा : १२०।

४. 'वह आकाशों और धरती जैसी अनोखी नई चीज़ों का बनाने वाला है। जब वह किसी बात का निर्णय करता है तो बस उसके लिए कह देता है—'हो जा' तो वह हो जाती है।' — २ : सूर-ए-अल-बक़रा : ११७।

५. 'सब प्रशंसा अल्लाह के लिये है, जो सारे संसार का 'रब' है।' — १ : सूर-ए-अल-फ़ातिहा : १।

६. 'वही जिसने तुम्हारे लिए धरती को बिछौना और आकाश को छत बनाया। आकाश की ओर से पानी उतारा और उसके द्वारा तुम्हारी रोज़ी के लिए हर तरह के खाद्य पदार्थ पैदा किए। तो जब तुम जानते हो तो अल्लाह के समवर्ती न बनाओ।' — २ : सूर-ए-अल-बक़रा : २२।

७. 'यदि इन दोनों (आकाश और धरती) में अल्लाह के सिवा और दूसरे 'इलाह' (पूज्य) भी होते, तो दोनों की व्यवस्था बिगड़ जाती। तो अल्लाह की महिमा के जो राजसिंहासन का 'रब' है प्रतिकूल है जो गुण ये बयान करते हैं।' — २१ : सूर-ए-अल-अंबिया : २२।

८. 'तुम उसके सिवा जिनकी 'इबादत' करते हो, वे इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कि निरे नाम हैं, जो तुमने और तुम्हारे पूर्वजों ने रख लिये हैं। अल्लाह ने

कर 'शिर्क' एवं बहुदेववाद को स्वीकार करना वर्जित है। शिर्क और अनेकेश्वरवाद मनुष्यों की कल्पनामात्र के द्योतक हैं। शिर्क के कारण मनुष्य का ध्यान ईश्वर के सम्बन्ध में दुर्बल हो जाता है। अल्लाह और बन्दे का रिश्ता टूट जाता है। इसलिए इस्लाम में शिर्क को बहुत बड़ा गुनाह (पाप) माना गया है।

२. नमाज़ अथवा 'सलात'

नमाज़ इस्लाम की रीढ़, दीन का स्तम्भ, मोक्ष की शर्त, ईमान की रक्षक और पवित्रता की नींव है। दिन में पांच बार नमाज़ पढ़ने का आदेश है।[१] यह निश्चित समय में 'अल्लाह' का स्मरण है।[२] इस व्यवस्था का पालन करते हुए मुसलमान पांच बार ख़ुदा के सामने उपस्थित हो पाप-कर्म से बचने की प्रार्थना और सच्चाई के मार्ग पर अग्रसर होने की सामर्थ्य संचित करता है। यह सफलता की कुंजी है।[३] ईश्वर की 'इबादत' का विधान है।[४] नमाज़ प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह स्वतन्त्र हो या दास,

---

उनके लिये कोई सनद नहीं उतारी। हुक्म (शासनाधिकार) तो बस अल्लाह का है, उसने हुक्म दिया है कि उसके सिवा किसी की 'इबादत' न करो। यही सही और सीधा 'दीन' (धर्म) है, परन्तु अधिकतर लोग नहीं जानते।'

— १२ : सूर-ए-यूसुफ़ : ४०।

१. फ़ज्र (सूर्योदय से पहले)
ज़ुहर (मध्यान्ह के पश्चात)
अस्र (अपरान्ह के पश्चात)
मग़रिब (सूर्यास्त होने पर)
इशा (रात्रि के प्रथम प्रहर में)

२. 'फिर जब तुम नमाज़ पूरी कर चुको, तो खड़े, बैठे और लेटे हर समय अल्लाह को याद करो। फिर जब तुम्हें इत्मीनान हो जाए, तो पूरी नमाज़ 'क़ायम' करो। निस्संदेह ईमान वालों पर समय की पाबन्दी के साथ नमाज़ अदा करनी अनिवार्य है।' — ४ : सूर-ए-अन-निसा : १०३।

३. 'सफल हो गया वह जिसने अपने को संवारा और अपने 'रब' के नाम का स्मरण किया तो नमाज़ पढ़ी।' — ८७ : सूर-ए-अल-आला : १४, १५।

४. 'निस्सन्देह मैं अल्लाह हूं। मेरे सिवा कोई 'इलाह' नहीं। अतः तू मेरी इबादत कर और मेरी याद के लिये नमाज़ क़ायम कर।'

— २० : सूर-ए-ताहा : १४।

धनवान हो या दरिद्र, रोगी हो या निरोग, यात्री हो या स्थायी रूप से रहने वाला सब पर प्रत्येक परिस्थिति में अनिवार्य है। कोई भी वयस्क व्यक्ति किसी भी स्थिति में इससे मुक्त नहीं हो सकता। विशेष परिस्थितियों में 'क़ज़ा'[1] द्वारा नमाज़ पूरी की जा सकती है। ज़कात, रोज़ा, हज्ज के सम्बन्ध में कुछ शर्तों के उपरान्त छूट मिल जाती है। या उसमें कुछ रियायत की आज्ञा है, किन्तु नमाज़ के लिए ऐसी कोई गुंजाइश नहीं है। यहां तक कि मैदान-ए-जंग में भी नमाज़ फ़र्ज़ है।

नमाज़ ऐसा अमल है जिसमें शरीर, बुद्धि और हृदय सम्मिलित होते हैं और इन तीनों में दर्शन और विवेक का सुन्दर सामंजस्य विद्यमान होता है। शरीर के हिस्से में क़याम, (खड़ा होना), रुकूअ (घुटने पर हाथ रखकर झुकना) और सजदा (ज़मीन पर सर टेकना) आया है। जिव्हा के हिस्से में तिलावत (क़ुरआन शरीफ़ की आयतें पढ़ना) और तस्बीह (ईश्वर की महानता का वर्णन करना) आई है। बुद्धि के हिस्से में चिंतन और हृदय के हिस्से में ईश्वर के प्रति तन्मयता और भक्तिभाव से हृदय का द्रवित होना आया है। दिन में पांच बार की नमाज़ के अतिरिक्त ईद, बक़रीद, सूर्य या चन्द्र ग्रहण, विपत्ति, मरण आदि के समय भी नमाज़ क़ायम की जाती है। रमज़ान के महीने में तरावीह की नमाज़ पढ़ी जाती है। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने कहा है—'सबसे पहली चीज़ जिसका क़ियामत के रोज़ बंदे से हिसाब लिया जाएगा वह नमाज़ है। अगर यह ठीक रही तो वह कामयाब हुआ और अगर यह ख़राब निकली तो नाकाम और नामुराद हुआ। अगर उसके फ़राइज़ में कुछ कमी नज़र आएगी तो अल्लाह तआला कहेगा कि देखो मेरे बन्दे के नामए-आमाल में कुछ नफ़ली नमाज़ें हैं। फिर उससे फ़राइज़ की कमी को दूर कर दिया जायेगा और बाक़ी आमाल के साथ भी यही मामला होगा।'[2]

इस प्रकार इस्लाम में नमाज़ की महत्ता अन्य सिद्धांतों की अपेक्षा अधिक है।

३. रोज़ा (उपवास)

मनुष्य ईश्वर की विलक्षण रचना है। यह शरीर और आत्मा का

---

१. परिस्थितिवश यदि नमाज़ का निर्धारित समय व्यतीत हो जाये, तो इस्लाम में 'क़ज़ा' नमाज़ पढ़ने का आदेश दिया गया है।

२. अबुल-हसन अली नदवी, अरकान-ए-अरबआ, तिर्मिज़ी और नसई, पृ० ९८।

समन्वित रूप है। यदि आत्मा का प्रभाव शरीर की अपेक्षा अधिक हुआ तो मनुष्य सांसारिक जीवन से कट कर भगवद्भक्ति में लीन हो जाता है और यदि शरीर को आत्मा की तुलना में अधिक महत्त्व दिया जाये तो मनुष्य ऐश्वर्य प्रेमी बन जाता है। अतः इस्लाम ने मनुष्य को इस दलदल से बचाने के लिए 'रमज़ान' माह के रोज़े अनिवार्य कर दिए हैं। क़ुरआन शरीफ़ में मुसलमानों पर 'रोज़ा' फ़र्ज़ किया गया है।[1]

इसका उद्देश्य मनुष्य के आध्यात्मिक और नैतिक विकास के साथ हृदय और आत्मा की शुद्धि है। यह मनुष्य को धर्मपरायण और संयमी बनाता है। 'रोज़े की स्थिति में वह बहुत-सी बुराइयों और अवज्ञाओं से बच जाता है। हज़रत मुहम्मद सल्ल० की हदीस के अनुसार रोज़ा (जीवन संघर्ष में) एक ढाल है।

सूर्योदय से आधा घंटा पूर्व 'सहर' के समय से सूर्यास्त तक अन्न जल आदि त्याज्य है। इस स्थिति में पांच वक़्त की नमाज़ के अतिरिक्त ध्यान, ज्ञान और क़ुरआन की तिलावत पर विशेष बल दिया गया है। इस प्रकार शरीर और हृदय को विभिन्न प्रकार की बुराइयों से मुक्त रखने का विधान है। सूर्यास्त होने पर रोज़ा खोलते या 'इफ़तार' करते हैं। प्रत्येक वयस्क पर रोज़ा फ़र्ज़ है। विशेष परिस्थितियों में धार्मिक शर्तों के साथ 'रोज़े' के स्थान पर अन्य अनुष्ठानों का आदेश दिया गया है, जिनकी पूर्ति के उपरान्त मनुष्य अपने 'फ़र्ज़' से उऋण हो सकता है।

४. ज़कात (दान)

इस विश्व में मनुष्य की सुख-सुविधाओं के लिए ईश्वर ने विविध प्रकार की वस्तुएं निर्मित की हैं। विश्व की सम्पूर्ण वस्तुएं केवल मुट्ठी भर लोगों के अधिकार में न रहें इसलिए उसने ऐसे नियम बना दिए हैं जिनका पालन करते हुए प्रत्येक मनुष्य आवश्यक और जीवनोपयोगी वस्तुओं को दूसरों तक पहुंचा सके। यह विधि मनुष्यों में परस्पर-प्रेम और त्याग की भावना को बल प्रदान करती है। इसके लिए इस्लाम में ज़कात ख़ुम्स, ख़ैर-ख़ैरात और सदक़े का विधान है।[2] इसके द्वारा मनुष्य का इहलोक

---

१. 'हे ईमान वालो ! तुम पर रोज़ा फ़र्ज़ किया गया है, जिस तरह तुमसे पहले के लोगों पर फ़र्ज़ किया गया था, ताकि तुम (अल्लाह का) डर रखने वाले बन जाओ।' — २ : सूर-ए-अल बक़रा : १८४।

२. 'तो यदि यह तौबा कर लें और नमाज़ क़ायम करें और ज़कात दें तो तुम्हारे

और परलोक दोनों में उद्धार होता है। इनमें से ख़ैर-ख़ैरात नेकी की अलामत होते हुए भी अनिवार्य नहीं है, किन्तु क़ुरआन में धन-सम्पत्ति पर ख़ुम्स (५वें हिस्से) और ज़कात (४०वें हिस्से) की अनिवार्यता घोषित की गई है।[१] यह ईश्वर प्रदत्त वस्तुओं के प्रति कृतज्ञता की अभिव्यक्ति,[२] विभिन्न प्रकार की बुराइयों से मुक्ति[३] एवं मन-मस्तिष्क की शुद्धि का साधन है।[४] ईश्वर का कृपापात्र बनने के लिए ज़कात देना आवश्यक है।[५]

वर्ष में एक बार 'ज़कात' देना आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न (साहिबे निसाब) मुसलमान के लिए 'फ़र्ज़' है। इसकी मात्रा विभिन्न प्रकार की वस्तुओं (कृषि और उपवन, पशु, बहुमूल्य वस्तुएं, व्यापार, नौकरी आदि) पर निर्धारित कर दी गई है। कृषि और उपवन से सम्बन्धित ज़कात उत्पत्ति के उपरांत दी जाती है। अचानक प्राप्त होने वाले लाभ पर वर्ष व्यतीत होने की प्रतीक्षा किए बिना तुरन्त ख़ुम्स अर्थात पांचवां हिस्सा देना आवश्यक है। जिस उपलब्धि के लिए मनुष्य स्वयं परिश्रम करता है

दीनी भाई हैं।' — ९ : सूर-ए-अत-तौबा : ११।

१. 'जो नमाज़ क़ायम करते और 'ज़कात' देते है और वे ऐसे हैं जो कि आख़िरत पर विश्वास करते हैं।' — २७ : सूर-ए-अन-नम्ल : ३।

२. 'मेरे जो बंदे 'ईमान लाए हैं उनसे कह दो कि ये 'नमाज़' क़ायम करें और हमने उन्हें जो कुछ दिया है उसमें से छिपाकर और खुले रूप में ख़र्च करें, इससे पहले कि वह दिन आए जिसमें न कोई सौदा होगा और न कोई मित्रता होगी।' — १४ : सूर-ए-इब्राहीम : ३१।

३. 'और यदि तुम खुले तौर पर 'सदक़ा' दो तो यह भी अच्छी बात है और यदि उसे छिपा कर ग़रीबों को दो, तो यह तुम्हारे लिए ज़्यादा अच्छा है और वह तुम्हारी कितनी ही बुराइयों को दूर कर देगा। और अल्लाह जो कुछ तुम करते हो उसकी ख़बर रखता है।' — २ : सूर-ए-अल-बक़रा : २७१।

४. 'हे नबी ! तुम उनके मालों में से 'सदक़ा' लेकर उन्हें पाक करो और उनकी आत्मा को विकसित करो तथा उनके लिये दुआ करो : निस्संदेह तुम्हारी दुआ उनके लिये संतोष-निधि है। अल्लाह सुनने और जानने वाला है।'

— ९ : सूर-ए-अत-तौबा : १०३।

५. 'तुम नेकी और वफ़ादारी के दर्जे को नहीं पहुंच सकते जब तक कि अपनी उन चीज़ों में से ख़र्च न करो जो तुम्हें प्रिय हैं और जो चीज़ भी तुम ख़र्च करोगे, अल्लाह उसका जानने वाला है।' — ३ : सूर-ए-आले इमरान : ९२।

उस पर उश्र या दसवां हिस्सा दिया जाता है।

५ हज्ज (तीर्थ)

'हज्ज' का अर्थ है तीर्थ-दर्शन करना। 'हज्ज' एक 'इबादत' है, जिस में मनुष्य अल्लाह के घर अर्थात कअबः के दर्शन करने की इच्छा से मक्का जाता है। 'हज्ज-ए-बैत-उल्लाह' ईश्वर के प्रति अपार श्रद्धा, प्रेम, बंदगी और ईश-प्रशंसा का द्योतक है। कअबः अल्लाह की इबादत का केन्द्र और शांति का स्थान है।[१] परिस्थिति, अर्थ और स्वास्थ्य की दृष्टि से सम्पन्न व्यक्ति पर हज्ज फ़र्ज़ है।[२] क़ुरआन में हज्ज के महत्व की व्यापक चर्चा की गई है।[३] कअबः दर्शन से अल्लाह के स्मरण के साथ बहुत सी विस्मृत घटनाएं जीवन के साथ पुनः जुड़ जाती हैं। यह अल्लाह की बहुमूल्य देन, धरोहर और निशानी—तौहीद और रसूलों के जिहाद और सब्र—का द्योतक है। हज्ज इस्लामी राष्ट्रीयता की विजय का प्रतीक है जहां सारे भेद मिटकर

---

१. 'और याद करो जब कि हमने इस घर (काबा) को लोगों के लिये केन्द्र और शांति स्थल बनाया और हुक्म दिया कि इब्राहीम के वासस्थान को 'नमाज' की एक जगह बनाओ। इब्राहीम और इस्माईल को जिम्मेदार बनाया कि मेरे घर का 'तवाफ़' (परिक्रमा) और 'एतकाफ़' और रूकूअ 'सजदा' करने वालों के लिए पाक रखो।' — २ : सूर-ए-अल-बक़रा : १२५।

२. 'निस्सन्देह पहला घर जो लोगों के लिए बनाया गया वही है जो मक्का में है, सारे संसार के लिये बरकत और मार्ग दर्शन का केन्द्र है। वहां स्पष्ट निशानियां हैं, इब्राहीम का वासस्थान है, जिसने उसमें प्रवेश किया वह सुरक्षित हो गया और लोगों पर अल्लाह का हक़ है कि जो वहां तक पहुंचने की सामर्थ्य रखते हैं उस घर का हज्ज करें और जिसने कुफ़्र किया तो अल्लाह सारे संसार से बे-परवाह है।' — ३ : सूर-ए-आले इमरान : ९६, ९७।

३. 'और लोगों को हज्ज के लिए पुकार दो कि वे प्रत्येक गहरे मार्गों से पैदल और हल्के शरीर की (छरहरी) ऊंटनियों पर तेरे पास आएं, ताकि वे अपने फ़ायदों को देखें (जो यहां उनके लिये रखे गये हैं) और कुछ मालूम (निश्चित) दिनों में उन मवेशी-चौपायों पर अल्लाह का नाम लें जो उसने उन्हें दिये हैं। फिर उस में से स्वयं खाओ और तंगहाल मोहताज को भी खिलाओ। फिर अपना मैल-कुचैल दूर करें। अपनी मन्नतों को पूरा करें और इस पुरातन घर (काबा) का 'तवाफ़' (परिक्रमा) करें

— २२ : सूर-ए-अल हज्ज : २७, २८, २९।

केवल एकता शेष रहती है। यहां पहुंच कर समस्त इस्लामी जातियां अपनी जातीय और राष्ट्रीय वेशभूषा को जो उनकी विशेष पहचान है, जिससे जातिगत विषमता उत्पन्न होती है त्याग कर एक सा लिबास धारण करती हैं जिसे 'अहराम' कहा जाता है सब मिलकर बड़ी नम्रता और विनय के साथ एक भाषा में एक तराना और एक नारा लगाते हैं— 'अल्लाहुम्मा लब्बैक-लब्बैक ला शरीक लका लब्बैक-इन्नल हम्द वन्नेमता लका वल मुल्क ला शरीक लका।'

(हाज़िर हूं, ऐ अल्लाह! मैं तेरे हुज़ूर हाज़िर हूं, तेरा कोई शरीक नहीं। मैं तेरे हुज़ूर हाज़िर हूं, निश्चय ही प्रशंसा तेरे ही लिए है। सारे उपकार तेरे ही हैं। बादशाही सर्वथा तेरी है। तेरा कोई शरीक नहीं।)

अस्तु, उक्त पांच धार्मिक अनुष्ठानों पर इस्लाम की बुनियाद निर्भर है। इसके द्वारा व्यक्ति अंतर्जगत और बहिर्जगत दोनों में सन्तुलन स्थापित करने की अपूर्व क्षमता उत्पन्न कर लेता है।

राजनीतिक और आर्थिक परिवेश

क़ुरआन में इस्लाम का राजनीति विषयक मौलिक दृष्टिकोण[१], क़ानून और आज्ञापालन[२], ख़िलाफ़त,[३] मंत्रणा परिषद,[४] संविधान के मूल

---

१. 'वह अल्लाह है, वह जिसके सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं, सर्वशासक है, अत्यन्त गुणवान, शांतिस्वरूप, शरणदाता, संरक्षक, प्रभुत्वशाली, प्रभावशाली, अत्यन्त महान।' — ५९ : सूर-ए-अल-हश्र : २३।

२. 'हमने तौरात में उन्हें हुक्म दिया था कि जान के बदले जान, आंख के बदले आंख, नाक के बदले नाक, कान के बदले कान, दांत के बदले दांत और सब आघातों का इसी तरह बराबर बदला है, तो जो उसे क्षमा कर दे, यह उसके लिये प्रायश्चित होगा और जो उसके अनुसार फ़ैसला न करे जो अल्लाह ने उतारा है तो ऐसे ही लोग ज़ालिम हैं।' — ५ : सूर-ए-अल-माइदा : ४५।

३. 'हे दाऊद! हमने तुझे धरती का ख़लीफ़ा बनाया है, अतः तू लोगों के बीच हक़ के साथ हुकूमत कर और अपनी इच्छा का अनुपालन न कर कि वह तुझे अल्लाह के मार्ग से भटका दे।' — ३८ : सूर-ए-साद : २६।

४. 'हे नबी! आप अपने कामों में मंत्रणा कर लिया करें।'

— २ : सूर-ए-अल-बक़रा : १५९।

सिद्धांत[१], राज्य का उद्देश्य, मूल अधिकार[२] विदेश-नीति[३], और जिहाद[४] सम्बन्धी व्यापक निर्देश विद्यमान हैं।

इस्लाम ईश्वर और मनुष्य तथा संसार में मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्ध की व्याख्या का नाम है। वह मनुष्य को इन्हीं दुहरे सम्बन्धों के साथ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में चलने का निर्देश देता है। मनुष्य के मन, वचन और कर्म का प्रत्येक क्षेत्र इस्लाम की दृष्टि में है। ऐसे कार्य जो मनुष्य और ईश्वर के सम्बन्ध को दुर्बल बना दें या उसके पारस्परिक सम्बन्धों को तोड़ दें, इस्लाम उनको अनुचित मानता है तथा उनकी अपेक्षा ऐसे आचरण पर बल देता है जो मनुष्य और ईश्वर तथा मनुष्यों के पारस्परिक संबन्ध को दृढ़ बनाए।

ईश्वर सृष्टि का निर्माता भी है, शासक और अधिकारी भी। मनुष्य उसकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। विश्व की समग्र वस्तुएं उसी (मनुष्य) के प्रयोग एवं सुख-सुविधा के लिए हैं। मनुष्य द्वारा इन वस्तुओं का प्रयोग विविध प्रकार की कला और विज्ञान का मूल स्रोत है। इसकी नींव इस्लाम में प्रतिपादित दुहरे संबन्ध पर आधारित है। यही स्थिति इस्लाम में निर्देशित अर्थ-व्यवस्था की है। इस संबन्ध में क़ुरआन और हज़रत

---

१. 'हे ईमान वालो! अल्लाह का आदेश मानो और रसूल का आदेश मानो और उनका जो तुम में अधिकारी लोग हैं, फिर भी यदि तुम्हारे बीच किसी बारे में झगड़ा हो जाये, तो क़ुरआन और रसूल (सल्ल०) के दिये हुये आदेशों के अनुसार फ़ैसला करो।' — ४ : सूर-ए-अन-निसा : ५९

२. 'किसी जान को क़त्ल न करो जिसको अल्लाह ने हराम किया है सिवाय हक़ के।' — १७ : सूर-ए-बनी इसराईल : ३३।
'हे ईमान लाने वालो! परस्पर एक-दूसरे के माल को अवैध रूप से न खाओ सिवा इसके कि तुम्हारी आपस की रज़ामन्दी से कोई सौदा हो और अपनों की हत्या न करो।' - ४ : सूर-ए-अन-निसा : २९।

३. 'समझौते (संधि) के बाद कोई जाति धोखा दे तो पहले संधि समाप्त करो फिर कोई कार्रवाई करो।' - ८ सूर-ए-अल-अनफ़ाल : ५८।

४. 'जो लोग 'ईमान' लाये वे अल्लाह के मार्ग में युद्ध करते हैं और जिन लोगों ने कुफ़्र' किया वे 'ताग़ूत' के मार्ग में युद्ध करते हैं।' - ४ : सूर-ए-अन-निसा : ७६।

मुहम्मद सल्ल० ने विविध प्रकार के सिद्धान्त और नियमों पर प्रकाश डाला है। इसी पूर्व निर्धारित आर्थिक व्यवस्था के कारण इस्लामी अर्थशास्त्र गूढ़ और जटिल न होकर अत्यन्त स्पष्ट और सीधा है।

ईश्वर ने मनुष्य को जीविका-निर्वाह के साधन प्रदान किए।[१] इस की ज़िम्मेदारी ईश्वर पर है। अतः ईश्वर से सम्बन्ध बनाए रखना मनुष्य का परम कर्तव्य है। जो मनुष्य ईश्वर से संबन्ध बनाए रखता है निश्चित है कि वह अन्य मनुष्यों से भी सम्बन्ध बनाए रखेगा और इस संबन्ध की रक्षा के लिए वह बहुत-सी दोषपूर्ण स्थितियों से बच सकेगा। परस्पर संबन्धों के प्रति यह जागरूकता वर्गगत विषमताओं से जीवन और राष्ट्र को मुक्त करती है।[२]

संपत्ति एकत्र करना और उसे ख़र्च न करना अनुचित है।[३] इस्लाम इसका विरोधी है। पूंजी एकत्र करना, छिपाना आदि कृत्य इस्लामी सिद्धान्तों के प्रतिकूल हैं।[४] इससे जीवन की समुचित व्यवस्था में विघ्न पड़ता है, ईश्वर और मनुष्य के आध्यात्मिक संबन्ध तथा मनुष्य-मनुष्य के सांसारिक संबन्धों का तारतम्य समाप्त होता है। इस्लाम परिश्रम द्वारा

---

१. 'फिर उसने तुम्हें ठिकाना दिया और अपनी सहायता से तुम्हें शक्ति प्रदान की। तुम्हें पाक और अच्छी चीज़ों की रोज़ी दी ताकि तुम कृतज्ञ बनो।'
— ८ : सूर-ए-अल-अनफ़ाल : २६ ।

२. 'और हमने आदम की औलाद को श्रेष्ठता प्रदान की। उसे भूमि और समुद्र में सवारी दी। उसे पाक चीज़ों की रोजी दी तथा ऐसे बहुतों की अपेक्षा जिन्हें हमने पैदा किया है बड़ाई दी।' — १७ : सूर-ए-बनी-इसराईल : ७०।

३. 'तबाही है हर उस व्यक्ति के लिए जो कचोके लगाता है, चोटें करता रहता है। जिसने माल इकट्ठा किया है और उसे बार-बार गिनता रहा। समझता है उसे उसके माल ने अमर कर दिया। कुछ नही वह अवश्य फेंक दिया जाएगा हुतमा (हड़प कर जाने वाली) में।' — १०४ : सूर-ए-अल-हमज़ा : १,२,३,४।

४. 'बहलाए रक्खा तुम्हें अधिक से अधिक की तलब ने। यहाँ तक कि तुमने क़ब्रिस्तान के दर्शन कर लिये। कुछ नहीं तुम जल्दी ही जान लोगे—अवश्य ही तुम भड़कती हुई आग को देखोगे। फिर तुमसे उस दिन सुख-समृद्धि के विषय में अवश्य पूछा जाएगा।' — १०२ : सूर-ए-अत-तकासुर : १, २, ३, ६।

धनोपार्जन ही को मान्यता प्रदान करता है। यही कारण है कि उसमें ब्याज, जुआ आदि का भी निषेध है। धनोपार्जन एवं व्यय के औचित्य के संबन्ध में हदीस की यह पंक्ति उल्लेखनीय है—

'आदमी से पूछा जायेगा कि माल किन ज़राए से उसने हासिल किया और किन राहों पर ख़र्च किया।'[1] यह पहले कहा जा चुका है कि ईश्वर स्रष्टा और शासक है। संपूर्ण सृष्टि का विस्तार मनुष्य के लिए है। ईश्वर प्रदत्त वस्तुओं के प्रयोग में ऊंच-नीच, अमीर-ग़रीब, जाति-पांति जैसी विषमताओं का प्रश्न ही नहीं उठता। इस्लाम में प्रतिपादित भ्रातृत्व भावना इसी आर्थिक सिद्धान्त पर आधारित है।

सामाजिक परिप्रेक्ष्य

क़ुरआन में इस्लामी सामाजिक व्यवस्था और सदाचार संबन्धी शिक्षा का मूल स्रोत निहित है। उसमें भ्रातृत्व भावना, प्रेम-त्याग, उचित-अनुचित, कर्तव्य-अकर्तव्य तथा सामाजिक व्यवस्था संबन्धी व्यापक निर्देष उपलब्ध होते हैं। मनुष्य को दुर्गुणों से मुक्त करना,[2] उनमें नैतिक गुणों का विकास करना,[3] माता-पिता तथा अन्य संबन्धी, अनाथ, अपाहिज और पड़ोसियों के प्रति कर्त्तव्य[4], दंपत्ति का उत्तरदायित्वपूर्ण जीवन और आदर्श, रहन-सहन[5] तथा शिष्टाचार के तौर-तरीके सिखाना[6] क़ुरआन के उपदेशों का लक्ष्य है जिसके अभाव में जीवन और समाज की व्यवस्था

---

१. मनाज़िर अहसन गीलानी : इस्लामी मआशियात, भाग २, पृ० ३६१।

२. — २ : सूर-ए-अल-बक़रा : २७, ८४, १८८, २६४।
— ४ : सूर-ए-अन-निसा : २९, ३६, ३७, १२८।
— ६ : सूर-ए-अल-अनआम : १०८, १५२।
— १७ : सूर-ए-बनी-इसराईल : २७,३१, ३२, ३३।

३. — २ : सूर-ए-अल-बक़रा : १३४, १६५, १४६, १५३, १७७, २३७, २८०, २८३।
— ४ : सूर-ए-अन-निसा : ५८, ८६, १३५।

४. — २ : सूर-ए-अल-बक़रा : ८३, १७७, २१५, २२०।

५. — २ : सूर-ए-अल-बक़रा : १२८, १८७, २२१, २२३, २२९, २३२, २३३, २३७, २४०।
— ४ : सूर-ए-अन-निसा : ३, ४, १९, २०, २२, २३, २४, ३४, ३५, १२८, १२९।

६. — २४ : सूर-ए-अन-नूर : २७, २९, ५८, ६१, ६२।

परिपूर्ण नहीं होती। एक उन्नत और सुगठित जीवन तथा सामाजिक व्यवस्था के लिए उक्त आदेशों का पालन करना अनिवार्य हो जाता है।

हज़रत मुहम्मद सल्ल० तथा उनके उत्तराधिकारी जो चार ख़लीफ़ा हुये हैं उनके युग में सामाजिक जीवन का स्वरूप इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर सुगठित हुआ था।

अतः संक्षेप में हज़रत मुहम्मद सल्ल० द्वारा प्रस्तुत की गई आध्यात्मिक एवं नैतिक विचारधारा 'इस्लाम' उसके अनुयायी 'मुसलमान' और उसकी संस्कृति 'इस्लामी संस्कृति' कहलाती है। इस्लामी संस्कृति से तात्पर्य ऐसे समाज की जीवन पद्धति से है जिसका रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा, आचार-विचार, रीति-नीति, धर्म-दर्शन, राजनीति, अर्थ व्यवस्था, साहित्य, कला, विज्ञान आदि क़ुरआन और हदीस द्वारा निर्दिष्ट हों। विश्व में इस्लाम एक ऐसा प्रवृत्तिमूलक धर्म प्रमाणित हुआ कि जिसके अंतर्गत जीवन के आध्यात्मिक परिष्कार के साथ-साथ सांसारिक जीवन में संतुलित सुरुचिपूर्ण आचरण पर बल दिया गया है। इस्लाम ऐहिक एवं आध्यात्मिक जीवन के बीच संतुलन स्थापित करता है। वह न तो हमें निवृत्ति मार्ग को अपना कर एकांतवास करते हुए देवता तुल्य बनने की प्रेरणा देता है और न वह इसका प्रशंसक है कि कोई व्यक्ति सांसारिक भोग में संलग्न होकर दैत्य तुल्य आचरण करने लग जाए। संयमित और संतुलित जीवन ही इस्लामी जीवन का आधार है।

—o—